जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

लड़ाती कषाय एवं स्वार्थ है और बदनाम धर्म होता है।

ह्न बिन्दु में सिन्धु, पृष्ठ - 6

वर्ष : 26, अंक : 22 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये

फरवरी (द्वितीय) 2004 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पण्डित संजीवकुमार गोधा एवं पण्डित जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

अलीगढ़ (उ.प्र.) : यहाँ तीर्थधाम मंगलायतन में दिनांक 2 फरवरी से 6 फरवरी 2004 तक पंचकल्याणक महोत्सव की प्रथम वर्षगांठ के अवसर पर आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया ।

इस महोत्सव में वयोवृद्ध उत्साही विद्वान पण्डित कैलाशचन्दजी जैन अलीगढ़ की कक्षा तथा सुप्रसिद्ध तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर के प्रवचनसार परमागम के ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन पर मार्मिक प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, डॉ. किरीटभाई गोसलिया, ब्र. हेमन्तभाई गांधी, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित राकेशकुमारजी शास्त्री नागपुर आदि विद्वानों के नियमसार, समयसार एवं तत्त्वार्थसूत्र पर प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ मिला।

प्रात:कालीन प्रवचनों के पूर्व पूज्य गुरुदेवश्री के सी.डी प्रवचन होते थे। इस अवसर पर 170 तीर्थंकर मण्डल विधान का आयोजन किया गया। विधि-विधान के कार्य पण्डित अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना एवं पण्डित संजयकुमारजी शास्त्री नागपुर के निर्देशन में सम्पन्न हुये।

इस अवसर पर दिनांक 2 फरवरी, 2004 को वृषभाचल पाण्डाल का उद्घाटन डॉ. किरीटभाई गोसलिया फिनिक्स-अमेरिका द्वारा किया गया तथा पंच दिवसीय प्रथम वर्षगांठ महोत्सव का उद्घाटन श्रीमती कल्पा एवं श्रेयस जैन नैरोबी ने किया। झण्डारोहणकर्त्ता श्री शिवकुमारजी गर्ग, दीपक रेस्टोरेन्ट थे। सभा का संचालन पण्डित राकेशजी शास्त्री नागपुर ने किया। कार्यक्रम का शुभारंभ भव्य जिनेन्द्र शोभायात्रा से हुआ।

इस अवसर पर आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में मंगलार्थी युवा प्रकोष्ठ एवं मंगलार्थी महिला प्रकोष्ठ द्वारा निर्मोही नगरी, बाबूलाल जैन बाल विद्यालय के बालकों द्वारा सती मनोरमा, दिल्ली पब्लिक स्कूल अलीगढ़ के छात्रों द्वारा दिव्य देशना नामक नृत्य नाटिका तथा आदिनाथ विद्या निकेतन के छात्रों द्वारा अतीत के झरोखों में नामक नाटकों की प्रस्तुति की गई। राजसभा एवं इन्द्रसभा का भी विशेष आयोजन किया गया।

दिनांक 5 फरवरी को कहान नगर के शिलान्यास का कार्यक्रम प्रतिष्ठाचार्य ब्र. अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित संजय शास्त्री नागपुर के निर्देशन में सम्पन्न हुआ। शिलान्यास डॉ. किरीटभाई के करकमलों से सम्पन्न हुआ।

इसी प्रसंग पर आचार्य कुन्दकुन्द शोध संस्थान के भवन का शिलान्यास श्रीमती ज्योत्स्नाबेन अमेरिका एवं इन्द्रकुमार-राजेशकुमार जैन अलीगढ़ द्वारा सम्पन्न हुआ, जहाँ ताड़पत्रिय एवं हस्तलिखित जिनवाणी की सुरक्षा के अतिरिक्त उनके प्रकाशन एवं शोधकार्य की व्यवस्था की जायेगी। इसी दिन जिनवाणी मंदिर में जिनवाणी विराजमान की गई तथा वहाँ पर स्थापित आचार्यों के चित्रपटों का अनावरण भी किया गया।

दिनांक 6 फरवरी को कैलाशपर्वत पर विराजमान भगवान आदिनाथ का महामस्तकाभिषेक किया गया ।

शिविर में देश-विदेश से पधारे हजारों साधर्मियों ने लाभ लिया। महोत्सव में पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर का लगभग 7000/- रुपयों का सत्साहित्य एवं 5859/-रुपये के सी.डी. एवं ऑडियो कैसिट्स घर-घर पहुँचे।

गोष्ठी सानन्द सम्पन्न

आचार्य कुन्दकुन्द के जन्मोत्सव पर दिनांक 26 जनवरी 2004 को श्री टोडरमल स्मारक भवन में विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया; कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने की। मुख्यअतिथि पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा एवं ब्र. यशपालजी जैन थे। गोष्ठी में संभव जैन, आशीष जबेरा एवं अभिषेक सिलवानी ने आचार्य कुन्दकुन्द के जीवन, परिचय एवं जैन संस्कृति में उनके योगदान के ऊपर अपने विचार व्यक्त किये।

अध्यक्षीय भाषण के रूप में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने आचार्य कुन्दकुन्द की प्रसिद्धि के विभिन्न पहलुओं को स्पष्ट करते हुये उनकी कृतियों के बारे में कहा कि समयसार में आत्मा के स्वरूप को बताया है जबकि प्रवचनसार में परमात्मा के स्वरूप पर प्रकाश डाला है।

कार्यक्रम का संचालन प्रयंक जैन रहली एवं मंगलाचरण अमित जैन लुकवासा ने किया।

- नीरज जैन

सम्पादकीय –

पञ्चास्तिकाय परिशीलन

3 ह्न रतनचन्द भारिल्ल

प्रस्तुत पंचास्तिकाय संग्रह के प्रारम्भ में कुन्दकुन्दाचार्यदेव-प्रणीत प्राकृत गाथाओं पर समय-व्याख्या नाम की संस्कृत टीका लिखनेवाले आचार्य श्री अमृतचन्द्र मंगलाचरण के रूप में सर्वप्रथम कारणपरमात्मा को नमस्कार करते हैं ह्न

सहजानन्दचैतन्यप्रकाशाय महीयसे ।
नमोऽनेकान्तविश्रान्तमहिम्ने परमात्मने ।।1 ।।

सहज आनन्द एवं सहज चैतन्यप्रकाशमय होने से जो अति महान हैं तथा अनन्तधर्ममय होने से जो महिमा मण्डित हैं, उन कारणपरमात्मा को नमस्कार हो।

इस श्लोक में सहजानन्द और सहज चैतन्य प्रकाश तथा अनन्त धर्मों में विश्रान्त आदि सभी विशेषण शुद्धात्मा-कारणपरमात्मा के हैं; उसे ही सर्वप्रथम नमन किया है। इससे स्पष्ट है कि टीकाकार आचार्यदेव शुद्धात्मा के प्रति ही अधिक समर्पित हैं, उनके हृदय में कारणपरमात्मा के प्रति अधिक झुकाव है; क्योंकि कारणपरमात्मा के आश्रय या अवलम्बन से ही तो अरहंत-सिद्धस्वरूप कार्य परमात्मा बनते हैं, जो आचार्यदेव को अभीष्ट है; अत: परोक्षरूप से कार्यपरमात्मा को भी नमन हो ही गया।

अब टीकाकार आचार्यदेव जिनवाणी की स्तुति करते हैं ह्न

दुर्निवार – नयानीक – विरोध – ध्वंसनौषधि ।
स्यात्कारजीविता जीयाज्जैनी सिद्धान्त पद्धति: ।।2।।

स्यात्कार जिस जिनवाणी का जीवन है तथा ऐसी ही जिस जिनेन्द्र भगवान की सिद्धांतपद्धति है, जो नयसमूह के दुर्निवार विरोध का नाश करनेवाली औषधि है, वह जिनवाणी जयवंत हो।

'स्यात्' पद जिनदेव की अनैकान्तिक सिद्धान्त-पद्धति का जीवन है। स्यात्=कथंचित्, वाद=कथन ह्न किसी अपेक्षा से अनेकान्तमय वस्तुस्वरूप का कथन करना ही स्याद्वाद है, जो कि नयों के दुर्निवार विरोध का शमन करने में समर्थ है। विरोध-सा प्रतीत होनेवाले तीव्र विरोधाभास की विवक्षा बताकर विरोधाभास को नष्ट करने में समर्थ है।

'प्रत्येक वस्तु नित्यत्व, अनित्यत्व आदि अनेक-अनन्तधर्ममय है। वस्तु को सर्वथा नित्य अथवा सर्वथा अनित्य मानने में पूर्ण विरोध आता है तथा कथंचित् (द्रव्य अपेक्षा से) नित्यता और कथंचित् (पर्याय अपेक्षा से) अनित्यता मानने में किंचित् भी विरोध नहीं आता है' ह्न जिनवाणी स्यात्कार के द्वारा ऐसा स्पष्ट समझाती है।

इसप्रकार जिनेन्द्रभगवान की वाणी स्याद्वाद द्वारा अपेक्षा कथन से वस्तु का यथार्थ निरूपण करके, नित्यत्व-अनित्यत्वादि धर्मों में तथा उन-उन धर्मों को बतलानेवाले नयों में अबाधित रूप से अविरोध (सुमेल) सिद्ध करती है और उन धर्मों के बिना वस्तु की निष्पत्ति ही नहीं हो सकती है ह्न ऐसा निर्बाधरूप से स्थापित करती है।

(अब टीकाकार आचार्य अमृतचन्द्र इस शास्त्र की समय-व्याख्या नाम से टीका रचने की प्रतिज्ञा करते हैं।)

सम्यग्ज्ञानामलज्योतिर्जननी द्विनयाश्रया ।
अथात: समयव्याख्या संक्षेपेणाभिधीयते ।।3 ।।

जो सम्यग्ज्ञानरूपी निर्मल-ज्योति की जननी है, ऐसी दो नयों का आश्रय करनेवाली समय-व्याख्या टीका संक्षेप से कही जाती है।

इस तीसरे श्लोक में समय व्याख्या अर्थात् पंचास्तिकाय की व्याख्या; द्रव्य की व्याख्या; पदार्थ की व्याख्या करने की प्रतिज्ञा की गई है; विशेष स्पष्टीकरण करने का संकल्प किया गया है।

आचार्य अमृतचन्द्र ने 'समय-व्याख्या' नामक टीका के मंगलाचरण के साथ ही तीन श्लोकों द्वारा पंचास्तिकायसंग्रह के प्रतिपाद्य को स्पष्ट कर दिया है, जो कि इसप्रकार है ह्न

'पंचास्तिकायषड्द्रव्यप्रकारेण प्ररूपणम् ।
पूर्वं मूलपदार्थानामिह सूत्रकृता कृतम् ।।4 ।।
जीवाजीवद्विपर्यायरूपाणां चित्रवर्त्मनाम् ।
ततो नवपदार्थानां व्यवस्था प्रतिपादिता ।।5।।
ततस्तत्त्वपरिज्ञानपूर्वेण त्रितयात्मना ।
प्रोक्ता मार्गेण कल्याणी मोक्षप्राप्तिरपश्चिमा ।।6।।

यहाँ सबसे पहले सूत्रकर्ता आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने मूलपदार्थों का पंचास्तिकाय एवं षड्द्रव्य के रूप में निरूपण किया है।

इसके बाद दूसरे खण्ड में जीव और अजीव ह्न इन दो की विविध स्वभाववाली पर्यायोंरूप नवपदार्थों की व्यवस्था/स्वरूप आदि का प्रतिपादन किया है।

इसके बाद दूसरे खण्ड के अन्त में चूलिका के रूप में तत्त्व के परिज्ञानपूर्वक (पंचास्तिकाय, षड्द्रव्य एवं नवपदार्थों के यथार्थ ज्ञानपूर्वक) त्रयात्मक मार्ग से (सम्यग्दर्शन-ज्ञान व चारित्र की एकतारूप मार्ग से) कल्याणस्वरूप उत्तम मोक्षप्राप्ति कही है।''

गाथा १

इंदसदवंदियाणं तिहुवणहिदमधुरविसदवक्काणं ।
अंतातीदगुणाणं णमो जिणाणं जिदभवाणं ।।1।।

(हरिगीत)

शतइन्द्र वन्दित त्रिजग हितकर, विशद मधु जिनके वचन।
अनन्त गुणमय भव विजेता, जिनवरों को है नमन।।1।।

जो सौ इन्द्रों से वन्दित हैं; जिनकी वाणी तीन लोक को हितकर, मधुर एवं विशद अर्थात् निर्मल है, स्पष्ट है; जिनमें अनन्त गुण वर्तते हैं और जिन्होंने भव पर विजय प्राप्त की है; उन जिनवर को नमस्कार हो।

यहाँ इस गाथा की टीका करते हुए आचार्य अमृतचन्द्र स्पष्ट करते हैं कि ह्न कुन्दकुन्दाचार्य ने 'णमो जिणाणं' कहकर जिनेन्द्र भगवान को भाव नमस्कार रूप असाधारण मंगल किया है। तथा 'इंदसदवंदियाणं' कहकर वे जिनेन्द्रदेव देवाधिदेवपने के कारण सौ-सौ इन्द्रों से वंदित हैं ह्न ऐसा कहा है।

'तिहुवण-हिद-मधुर-विसदवक्काणं' कहकर यह कहा है कि उन जिनेन्द्रदेव की वाणी उर्ध्व, मध्य एवं अधोलोक के समस्त प्राणियों को हितकर है, मधुर है और विशद है, स्पष्ट है और 'अंतातीदगुणाणं' कहकर यह कहा है कि जो अनन्तगुणमय, परमचैतन्यमय शक्ति के विलास रूप तथा योगीन्द्रों से वंद्य हैं।

'जिदभवाणं' अर्थात् संसार पर विजय प्राप्त करनेवाले कहकर जिनेन्द्र भगवान का कृत-कृत्यपना प्रगट किया है। ऐसे कृत-कृत्य होने पर भी जिनेन्द्र भगवान अकृत-कृत्य जीवों को शरणभूत हैं ह्न ऐसा मंगलाचरण किया है। 'मंगल' शब्द के दो अर्थ हैं ह्न 1. जो मल को अर्थात् पाप को गाले-नष्ट करे वह मंगल है अथवा 2. जो सुख को प्राप्त कराये-लाये वह मंगल है।

श्री जयसेनाचार्यकृत टीका में इस गाथा का स्पष्टीकरण करते हुए सर्वप्रथम शास्त्र का मंगल, शास्त्र का निमित्त, शास्त्र का हेतु (फल), शास्त्र का परिमाण, शास्त्र का नाम तथा शास्त्र के कर्ता ह्न इन छह विषयों का विस्तृत विवेचन किया गया है।

पश्चात् जिनभगवन्तों के चार विशेषणों का वर्णन करके उन्हें भाव नमस्कार किया है। प्रथम तो, जिनभगवन्त सौ इन्द्रों से वंद्य है। ऐसे असाधारण नमस्कार के योग्य अन्य कोई लौकिकदेव नहीं है; दूसरे जिनभगवान की वाणी तीनलोक को शुद्ध आत्मस्वरूप की प्राप्ति का उपाय दर्शाती है, इसलिए हितकर है; वीतराग निर्विकल्प समाधि से उत्पन्न सहज-अपूर्वपरमानन्द पारमार्थिक सुखरसास्वाद के रसिकजनों के मन को हरती है, परम समरसी भाव के रसिक जीवों को मुदित करती है, इसलिए मधुर है; शुद्ध जीवास्तिकायादि सात तत्त्व, नव पदार्थ, छहद्रव्य और पाँच अस्तिकाय का संशय-विमोह-विभ्रम रहित निरूपण करती है, इसलिए अथवा पूर्वापर विरोधादि दोष रहित होने से, युगपद् सर्वजीवों को अपनी-अपनी भाषा में स्पष्ट अर्थ का प्रतिपादन करती है, इसलिए विशद-स्पष्ट-व्यक्त है। इसप्रकार जिनभगवान की वाणी ही प्रमाणभूत है; तीसरे, अनन्त द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव को जाननेवाला अनन्त केवलज्ञानगुण जिनभगवन्तों को वर्तता है; अत: बुद्धि आदि सात ऋद्धियाँ तथा मतिज्ञानादि चतुर्विध ज्ञान से सम्पन्न गणधरदेवादि योगीन्द्रों से भी वे वंद्य हैं। चौथे, पंच-परावर्तनरूप संसार को जिनभगवन्तों ने जीता है। इसप्रकार कृतकृत्यपने के कारण वे ही अन्य अकृतकृत्य जीवों को शरणभूत हैं, दूसरा कोई नहीं।

इसप्रकार चार विशेषणों से युक्त जिनभगवन्तों को ग्रन्थ के आदि में भावनमस्कार करके मंगल किया। यद्यपि शास्त्र स्वयं मंगलस्वरूप हैं, तथापि भक्ति के हेतु से मंगल का भी मंगल किया जाता है। जिसतरह सूर्य की दीपक से, महासागर की जल से, वागीश्वरी (सरस्वती) की वाणी से पूजा होती है। उसीतरह मंगलमय वस्तु का भी मंगलाचरण किया जाता है।

इस गाथा पर व्याख्यान करते हुए गुरुदेवश्री कहते हैं ह्न

इस पंचास्तिकाय शास्त्र का फल सम्यग्ज्ञान की उत्पत्ति है, शुद्धस्वभाव की प्राप्ति है। भगवान को नमस्कार करना ही मंगल है और ऐसा मंगलाचरण करने से विघ्नों का नाश और सुख की प्राप्ति होती है। यह पंचास्तिकाय शिवकुमार महाराजा आदि शिष्यों के लिए बनाया गया है। इसका प्रयोजन अज्ञान का नाश, सम्यग्ज्ञान की उत्पत्ति और शुद्धस्वभाव की प्राप्ति है। इस ग्रन्थ का परिमाण अर्थात् गाथा संख्या 173 है। इसका पूरा नाम पंचास्तिकाय संग्रह है और इसके मूलकर्त्ता सर्वज्ञ भगवान श्री वर्धमानस्वामी, उत्तरकर्त्ता गणधरदेव श्री गौतमस्वामी और परम्पराकर्त्ता श्री कुन्दकुन्दाचार्य-देव हैं।

यहाँ श्री कुन्दाकुन्दाचार्य भगवान को नमस्कार करते हैं। वे भगवान परम्परा से पूजते आ रहे सौ इन्द्रों से पूज्य हैं, उनकी वाणी मीठी, मधुर और रसीली है और उस वाणी को सुननेवाले पात्र जीव भी ऐसे हैं कि जो सम्यग्ज्ञान को प्राप्त करने योग्य हैं। जिन्हें संसार की अरुचि हो गई है और स्वभाव की प्राप्ति करना है। पंचास्तिकाय का फल अज्ञान की निवृत्ति और ज्ञानस्वभाव की प्राप्ति है। सम्यग्ज्ञान पाकर शुद्धि में वृद्धि करके चैतन्य का अनुभव करना ही इस शास्त्र का फल है।

अब भगवान के गुणों की बात करते हैं। उनके गुण अंतरहित हैं। उन्हें अनन्तज्ञान, अनन्तदर्शन इत्यादि गुण प्रगट हो गये हैं, जिसका कोई पार नहीं है, ऐसे अपने ज्ञान से सभी वस्तुओं को, क्षेत्र व काल की मर्यादा बिना जान सकते हैं। वे ज्ञानादि गुण अपने असंख्यप्रदेशी क्षेत्र में रहते हैं, दूसरे द्रव्य के क्षेत्र में नहीं रहते हैं। एकसमय में अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त वीर्य और अनन्त सुख प्रगट हो गये हैं। एक समय में अनन्त गुणों की अनन्त पर्यायें होती हैं और एक-एक पर्याय में अनन्त अविभाग-प्रतिच्छेद (अंश) होते हैं।

जिनेन्द्रदेव ने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भावरूप पंच परावर्तनों को जीत लिया है अर्थात् जो करना था, वह सब कर लिया है और संसार से जीवनमुक्त हो गये हैं। कई लोग कहते हैं कि भगवान ने दूसरों का भला किया, उपदेश दिया, तीर्थ की स्थापना की, हिंसा में अटके जगत को सत्य समझाया; परन्तु भाई ! ये सभी निमित्त के कथन हैं। बहुत स्थूल व्यवहार है, वस्तुत: भगवान ने पर का कुछ नहीं किया है; क्योंकि पर का कोई भी जीव कुछ भी नहीं कर सकता है। **'तिन्नाणं तारयाणं' ह्न** ऐसा जो पाठ आता है अर्थात् भगवान तरण-तारण हैं। उसका तात्पर्य यह है कि जब जीव स्वयं से तरे तो उसमें भगवान की वाणी को निमित्त कहा जाता है।

भगवान छद्मस्थ जीवों को मोक्ष प्राप्त कराने में कई अपेक्षा से शरणभूत हैं तथा जिन जीवों को मोक्षदशा प्राप्त नहीं हुई है, उन्हें भगवान शरणरूप हैं ह्न यह कथन निमित्त का है। वास्तव में तो कोई किसी को शरण ही नहीं दे सकता है; किन्तु जो जीव अपने आत्मा की सच्ची समझ करके, अन्तरदशा में एकाग्र होकर राग और अल्पज्ञता टालकर वीतराग-सर्वज्ञ पद प्रगट करते हैं तो उसमें भगवान निमित्त कहलाते हैं। ''चत्तारि सरणं पव्वज्जामि'' ऐसा चार शरण का पाठ तो हम प्रतिदिन करते हैं; परन्तु अपना आत्मा अरहंतादि की भाँति ही स्वभाव से अनन्तचतुष्टयमय है, स्व-चतुष्टयस्वरूप है; रागरहित है, ऐसा आत्मस्वरूप जाने बिना और उसकी शरण में आये बिना भगवान की शरण निमित्त नाम भी नहीं पाती है। जो स्वभाव की शरण लेता है, उसे ही भगवान की शरण निमित्त कहलाती है।

ऐसे जिनेश्वर भगवान को नमस्कार हो। जिनदेवरूप निमित्त, संयोग, तथा उनके प्रति राग और पुण्य की रुचि छोड़कर अन्तर-एकाग्रता करना भाव नमस्कार है। जो ऐसा भावनमस्कार अपने आत्मा को करता है, उसी जीव का भगवान को सच्चा द्रव्यनमस्कार होता है। ज्ञानी ऊपर कहे गये गुणधारक को इसप्रकार नमस्कार करता है।

तात्पर्य यह है कि ह्न निश्चय से तो अपना शुद्धात्मस्वरूप कारण-परमात्मा ही शरणभूत है; क्योंकि उसके आश्रय से ही कार्यपरमात्मारूप एवं अरहंत-सिद्धदशा की प्राप्ति होती है; अत: वही मंगलस्वरूप है, परम-मंगलमय है और उस परममंगलमय शुद्धात्मा की उपलब्धि में ये पंचपरमेष्ठी निमित्त हैं; अत: व्यवहार से ये पंचपरमेष्ठी शरणभूत हैं। कहा भी है ह्न

शुद्धात्म अरु पंचगुरु जग में शरणा दोय।
मोह उदय जिय के वृथा आन कल्पना होय।।

प्रवचनसार गाथा ८० में भी यही कहा है कि जो अरहंत भगवान को द्रव्यत्व-गुणत्व-पर्यायत्व से जानता है, पहचानता है; उसका मोह क्षय को प्राप्त होता है और वह परम-मंगल-स्वरूप शुद्धात्मा को प्राप्त कर,स्वयं पंचपरमेष्ठी में सम्मिलित हो जाता है। * *

आत्मार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

आत्मार्थी छात्र डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के सान्निध्य में रहकर चारों अनुयोगों के माध्यम से जैनधर्म का सैद्धान्तिक अध्ययन कर सकें तथा साथ ही संस्कृत, न्याय, व्याकरण आदि विषयों का आवश्यक ज्ञान प्राप्त करे ह्न इस महत्त्वपूर्ण उद्देश्य से जयपुर में विभिन्न ट्रस्टों के सहयोग से श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय चल रहा हैं, जिसमें लगभग 177 छात्र अध्ययन कर रहे हैं।

अबतक 331 छात्र शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करके शासकीय एवं अर्द्धशासकीय सेवाओं में रहकर विभिन्न स्थानों में तत्त्वप्रचार की गतिविधियाँ संचालित कर रहे हैं, जिनमें से 48 छात्र जैनदर्शनाचार्य की स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं।

ज्ञातव्य है कि यहाँ प्रवेश पानेवाले छात्रों को राजस्थान विश्वविद्यालय की जैनदर्शन (तीन वर्षीय शास्त्री स्नातक) कोर्स की परीक्षायें दिलाई जाती हैं, जो बी.ए. के समकक्ष हैं तथा सरकार द्वारा आई. ए. एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये मान्यता प्राप्त हैं।

शास्त्री परीक्षा में प्रवेश के पूर्व छात्र को योग्यतानुसार दो वर्ष का राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर का उपाध्याय परीक्षा का पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है जो हायर सैकेण्ड्री (12वीं) के समकक्ष है। इसप्रकार कुल 5 वर्ष का पाठ्यक्रम है। इसके बाद दो वर्ष का जैनदर्शनाचार्य का कोर्स है, जो एम.ए. के समकक्ष है।

उपाध्याय में प्रवेश हेतु किसी भी प्रदेश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की सेकेण्डरी परीक्षा (कक्षा दसवीं) अंग्रेजी सहित उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

यहाँ डॉ.हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के सान्निध्य में छात्रों को निरंतर आध्यात्मिक वातावरण प्राप्त होता है। सभी छात्रों को आवास एवं भोजन की सुविधा नि:शुल्क रहती है।

आगामी सत्र 25 जून 2004 से प्रारंभ होगा। स्थान अत्यंत सीमित है, अत: प्रवेशार्थी शीघ्र ही निम्नांकित पते से प्रवेशफार्म मंगाकर अपना प्रार्थना-पत्र अंक सूची सहित जयपुर प्रेषित करें। यदि प्रवेश योग्य समझा गया तो उन्हें देवलाली (नासिक) महाराष्ट्र में 09 मई से 26 मई, 2004 तक होनेवाले ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविर में साक्षात्कार हेतु बुलाया जायेगा, जिसमें उन्हें प्रारंभ से अन्त तक (18 दिन) रहना अनिवार्य होगा।

यदि दसवीं का परीक्षाफल अभी उपलब्ध न हुआ हो तो पूर्व परीक्षाओं की अंक सूची की सत्यप्रतिलिपि के साथ प्रार्थनापत्र भेज सकते हैं। दसवीं का परीक्षा परिणाम प्राप्त होते ही तुरंत भेज दें।

देवलाली का पता –
पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,
कहान नगर, लाम रोड, देवलाली,
जिला - नासिक 422401 (महा.)
फोन - (0253) 2491044

पण्डित रतनचन्द भारिल्ल
श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धा. महाविद्यालय,
श्री टोडरमल स्मारक भवन,
ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.)
फोन - (0141) 2705581, 2707458

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित 38 वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर, देवलाली (नासिक-महा.) में

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित 38 वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर इस वर्ष रविवार, दिनांक 09 मई से बुधवार, 26 मई 2004 तक होना निश्चित हुआ है।

इस शिविर में मुख्यरूप से धार्मिक अध्ययन करानेवाले बन्धुओं (अध्यापकों) एवं मुमुक्षु भाईयों को शिक्षण-प्रशिक्षण विधि से प्रशिक्षित किया जायेगा।

इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, ब्र. यशपालजी जैन एवं पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील आदि विद्वानों के प्रवचनों और कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा। इनके अतिरिक्त शिक्षण-प्रशिक्षण में सहयोग देनेवाले अनेक प्रशिक्षित अध्यापक भी पधारेंगे। जिनके द्वारा बालकों, प्रौढ़ों और महिलाओं के लिये शिक्षण-कक्षाओं की व्यवस्था की जायेगी।

बालबोध-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये बालबोध पाठमाला भाग - 1, 2, 3 की तथा प्रवेशिका-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग - 1, 2, 3 की प्रवेश प्रतियोगितात्मक लिखित परीक्षा दिनांक 8 मई को दोपहर 2 बजे देवलाली में ली जावेगी, जिसमें प्रथम श्रेणी के अंक प्राप्त करना आवश्यक होगा। अत: प्रवेशार्थी उक्त पुस्तकों की पूरी तैयारी करके आवें।

ध्यान रहे, प्रवेशिका प्रशिक्षण में उन्हें ही प्रवेश दिया जायेगा, जो बालबोध प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं।

आपके यहाँ से कितने व कौन-कौन भाई-बहिन शिविर में पधार रहे हैं, इसकी सूचना निम्नांकित पतों पर अवश्य भेजें; ताकि आपके आवास एवं भोजनादि की समुचित व्यवस्था की जा सके।

ह्न पत्र-व्यवहार का पता ह्न
श्री सीमन्धर जिनालय
173-175, मुम्बादेवी रोड, मुम्बई - 400 002
फोन - (022) 23425241

देवलाली पहुँचने का पता ह्न
पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,
कहान नगर, लाम रोड, देवलाली,
जिला - नासिक (महा.)
फोन - (0253) 2492278

जयपुर का पता -
डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
श्री टोडरमल स्मारक भवन,
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 15 (राज.)
फोन-(0141) 2707458, 2705581

नोट :ह्न महाविद्यालय में प्रवेश हेतु प्रवेश फार्म मार्च (द्वितीय), 2004 के अंक में प्रकाशित किया जायेगा।

निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन

दिगम्बर जैन महासमिति राजस्थान अंचल की ओर से श्रीमती चांदबाई सेठी पारमार्थिक ट्रस्ट के ट्रस्टी श्री वीरेन्द्रकुमारजी सेठी एवं श्रीमती शांताजी सेठी के सौजन्य से द्वितीय अखिल भारतीय निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन श्री विरधीलालजी सेठी शताब्दी स्मृति वर्ष में किया जा रहा है। निबन्ध का विषय '**आतंकवाद की समाप्ति अहिंसा से ही संभव है**' रखा गया है।

प्रतियोगिता में 11 वीं कक्षा से लेकर स्नातक स्तर तक अध्ययन रत छात्र-छात्रायें भाग ले सकते हैं। निबन्ध अधिक से अधिक 1200 शब्दों में होना चाहिये। प्रतियोगिता में निम्नप्रकार से पुरस्कार प्रदान किये जायेंगे।

1.प्रथम पुरस्कार (एक) - 2500 रुपये।

2.द्वितीय पुरस्कार (दो) - 1500 रुपये (प्रत्येक)

3.तृतीय पुरस्कार (दो) - 1000 रुपये (प्रत्येक)

4.सांत्वना पुरस्कार (चार) - 400 रुपये (प्रत्येक)

निबन्ध प्राप्त होने की अन्तिम तिथि 15 अप्रैल 2004 रखी गई है। पारितोषिक वितरण दिनांक 30 अप्रैल 2004 को किया जायेगा।

निबन्ध भेजने का पता – स्व. श्री बिरधीलालजी सेठी स्मृति निबन्ध प्रतियोगिता, दिग. जैन महासमिति राजस्थान अंचल कार्यालय, चाकसू का चौक, घी वालों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर -03 (राज.) **अथवा** वीरेन्द्रकुमारजी सेठी, 8 अरविन्द पार्क, टोंक फाटक, टोंक रोड, जयपुर।

धर्म प्रभावना

1. रतलाम (म.प्र.) : यहाँ विगत 6 माह से उज्जैन से स्थानान्तरित होकर रतलाम पधारे पण्डित पदमकुमारजी अजमेरा द्वारा प्रात: श्री दिगम्बर जैन तोपखाना मंदिर में मोक्षमार्गप्रकाशक एवं रात्रि में श्री दिगम्बर जैन हाथीवाला मन्दिर में जैन सिद्धान्त प्रवेशिका एवं तत्पश्चात् छहढाला ग्रन्थ पर नियमित प्रवचन चल रहे हैं। जिससे स्थानीय मुमुक्षु वर्ग अत्यधिक संख्या में लाभान्वित हो रहा है। इससे मुमुक्षु समाज में एक नवीन उत्साह भी जागृत हुआ है। प्रतिदिन शिशु वर्ग की पाठशाला एवं सामूहिक पूजन का भी आयोजन होता है। **– जम्बूकुमारजी पाटोदी**

2. सनावद (म.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द दिग. जैन युवा मुमुक्षु मण्डल द्वारा विगत पाँच माह से अनवरतरूप से वीतराग-विज्ञान पाठशाला का संचालन पण्डित रीतेशकुमारजी शास्त्री सनावद द्वारा किया जा रहा है; जिसमें बालबोध पाठमाला भाग-1,2,3 की कक्षा के अलावा प्रौढ़ एवं नव युवकों के लिये भी अतिरिक्त कक्षायें संचालित हो रही है। समय-समय पर विभिन्न प्रतियोगितायें, सांस्कृतिक कार्यक्रम भी आयोजित किये जाते हैं। ज्ञातव्य है कि पण्डित रीतेशजी शास्त्री द्वारा ही प्रत्येक रविवार को बेड़िया ग्राम में भी रात्रिकालीन पाठशाला संचालित की जा रही है; जिसमें 40-50 बालक एवं 40-50 प्रौढ़; इसप्रकार लगभग 100 लोग लाभान्वित हो रहे हैं।

3. रायपुर (छत्तीसगढ़) : यहाँ श्री चन्द्रप्रभ चैत्यालय में पंचपरमेष्ठी मण्डल विधान का आयोजन किया गया; जिसमें पण्डित नेमिचन्दजी रायपुर एवं श्री प्रद्युम्नजी फौजदार बड़ामलहरा द्वारा विधि-विधान के कार्य सम्पन्न कराये गये। इसी अवसर पर पण्डित अशोकजी शास्त्री रायपुर का बृहत्द्रव्यसंग्रह ग्रन्थ पर प्रवचन हुआ। **– समकित सिंघई**

महाराष्ट्र में पाठशाला निरीक्षण

श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक पण्डित प्रशांतकुमारजी मोहरे द्वारा महाराष्ट्र प्रान्त के औरंगाबाद, बुलढ़ाणा, परभणी, हिंगोली, वाशिम तथा यवतमाल जिलों के 33 स्थानों पर पाठशाला निरीक्षण किया गया। सभी स्थानों पर प्रवचनों एवं कक्षाओं के माध्यम से पाठशाला के कुशल संचालन हेतु आवश्यक निर्देश दिये। अनेक स्थानों पर नवीन पाठशाला का गठन किया गया तथा अनेक पाठशालाओं का पुनर्गठन किया गया।

परीक्षा सामग्री शीघ्र भेजें

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड ए-4 बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.) की शीतकालीन परीक्षाऐं 30 व 31 जनवरी तथा 1 फरवरी 2004 को सम्पन्न हो चुकी है।

संबंधित समस्त परीक्षा केन्द्र अपने यहाँ के छात्रों की परीक्षाओं की उत्तरपुस्तिकाऐं एवं मौखिक परीक्षा की रिपोर्ट अविलम्ब परीक्षा बोर्ड कार्यालय, जयपुर को भिजवाने का कष्ट करें; ताकि परीक्षा परिणाम एवं प्रमाण पत्र का कार्य समय पर सम्पन्न हो सके। साथ ही आगामी ग्रीष्मकालीन परीक्षाओं के लिये भी परीक्षा केन्द्रों को उचित समय सुविधा भी प्राप्त हो। **ह्न ओमप्रकाश आचार्य, प्रबन्धक (परीक्षा विभाग)**

प्रबन्धक एवं पुजारी के लिये

भारतवर्षीय दिग. जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, मुम्बई द्वारा प्रायोजित तीर्थ प्रबन्धन प्रशिक्षण संस्था का संचालन सिद्धक्षेत्र द्रोणगिरी (जि. छतरपुर) में किया जा रहा है। संस्थान में छात्रों को प्रबन्धन, अकाउण्ट, कम्प्यूटर, पूजन-विधान आदि में शिक्षित किया जाता है। यदि आप अपनी संस्था के लिये प्रबन्धक (वेतनमान -2500 से 3000 रुपये) तथा पुजारी (वेतनमान -2000 से 2500 रुपये) चाहते हैं तो स्वयं द्रोणगिरी पधारकर दिनांक 29 फरवरी 2004 को अपनी आवश्यकतानुसार योग्य व्यक्ति चुन सकते हैं। **– मंत्री,** श्री दि. जैन तीर्थ प्रबन्धन प्रशिक्षण संस्थान, सिद्धक्षेत्र द्रोणगिरी, पीली दुकान, बड़ामलहरा, जिला-छतरपुर 471311 (म.प्र.), फो.-(07689)252206-09 मो. 9425141012

छपकर तैयार हैं

पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, जयपुर की नवीन कृतियाँ ह्न

1. शलाका पुरुष, पूर्वार्द्ध (आचार्य जिनसेन विरचित आदिपुराण पर आधारित कृति, मूल्य 25/- रूपये) एवं

2. शलाका पुरुष, उत्तरार्द्ध (आचार्य गुणभद्र विरचित उत्तरपुराण पर आधारित कृति, मूल्य 35/- रूपये) छपकर तैयार है। इच्छुक महानुभाव निम्न पते से मंगा सकते हैं।

प्राप्तिस्थल : साहित्य विक्रय विभाग, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर। फोन : 2707458, 2705581

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 1

– डॉ॰ हुकमचन्द भारिल्ल

प्रवचनसार परमागम आचार्य कुन्दकुन्ददेव का विशिष्टतम ग्रंथ है। जिनेन्द्र भगवान की दिव्यध्वनि का सार यह प्रवचनसार ग्रंथ निरंतर 2000 वर्ष से अध्ययन-अध्यापन का विषय बना हुआ है।

यद्यपि समयसार आचार्य श्री कुन्दकुन्ददेव की सर्वोत्कृष्ट कृति मानी जाती है, तथापि विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में समयसार को स्थान प्राप्त नहीं हो सका; जबकि प्रवचनसार परमागम को सैंकड़ों वर्षों से विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में रहने का सम्मान प्राप्त है; क्योंकि इसकी जो प्रतिपादन शैली है, वह विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम के अनुकूल है।

जहाँ दर्शनशास्त्र का अध्ययन-अध्यापन होता है, ऐसे जितने भी विश्वविद्यालय हैं; वहाँ दर्शनशास्त्र के पाठ्यक्रम को दो भागों में बाँटा जाता है, जिसे हम प्रमाणव्यवस्था एवं प्रमेयव्यवस्था कहते हैं।

इस प्रवचनसार ग्रन्थ में भी प्रथम महाधिकार ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन एवं द्वितीय महाधिकार ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन नाम से है। यह वर्गीकरण दर्शनशास्त्र के वर्गीकरण के अनुकूल ही है; इसीकारण इस ग्रन्थ को विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में स्थान प्राप्त रहा है।

सम्पूर्ण विश्व को उक्त दो भागों में विभाजित करके देखना आधुनिक दर्शनशास्त्र की प्रमुख विशेषता है और यह विधि जैनदर्शन के लिए भी सर्वाधिक अनुकूल है।

प्रथम वह जाननेवाला तत्त्व, जिससे सारे जगत का ज्ञान होता है, जिसे हम ज्ञानतत्त्व कहते हैं तथा दूसरा वह ज्ञेयतत्त्व, जो उस ज्ञान के द्वारा जाना जाता है।

जो कुछ भी ज्ञान के द्वारा जाना जाता है, उन सभी को ज्ञान की अपेक्षा ज्ञेय एवं प्रमाण की अपेक्षा प्रमेय कहा जाता है। प्रमेय अर्थात् छहों द्रव्य, प्रमेय अर्थात् लोकालोक। जो कुछ भी जगत में है, वह सब प्रमेय है, ज्ञेय है।

इसप्रकार संपूर्ण जगत को दो भागों में विभाजित कर देखनेवाला यह ग्रन्थाधिराज प्रवचनसार आचार्य कुन्दकुन्द की प्रौढ़तम कृति है।

इस कृति को आचार्य जयसेन मध्यम रुचिवाले शिष्यों के लिए लिखी गई कृति मानते हैं। वे कहते हैं कि संक्षिप्त रुचिवाले शिष्यों के लिए पञ्चास्तिकाय और मध्यम रुचिवाले शिष्यों के लिए प्रवचनसार लिखा गया है।

समयसार शुद्धात्मा का प्रतिपादक ग्रन्थाधिराज है और अष्टपाहुड़ में आचार्य कुन्दकुन्द के प्रशासकरूप के दर्शन होते हैं। नियमसार उन्होंने अपनी भावना के लिए बनाया है; वह उनके दैनिक पाठ का साधन था।

इसतरह दार्शनिकों की दृष्टि में यदि प्रवचनसार सबसे महत्त्वपूर्ण है तो यह स्वाभाविक ही है; क्योंकि जैनदर्शन की जो वस्तुव्यवस्था है, वस्तु का स्वरूप है; उसका प्रतिपादन जितनी सूक्ष्मता से इस प्रवचनसार ग्रंथाधिराज में प्राप्त होता है; वैसा प्रतिपादन कुन्दकुन्द के अन्य ग्रन्थों में तो अलभ्य है ही; संपूर्ण जिनागम में भी बहुत ही दुर्लभता से प्राप्त होता है।

यह जगत जो ज्ञेयतत्त्व है, जिसे जानने की बात इस प्रवचनसार में अत्यंत गहराई से की गई है; उसे कैसे जाना जाय, उसे जानने का उपाय क्या है ? इसके उत्तर में आचार्य उमास्वामी तत्त्वार्थसूत्र में निम्नांकित सूत्र लिखते हैं ह्न '**प्रमाणनयैरधिगमः।**' प्रमाण व नयों के द्वारा वस्तु का स्वरूप जाना जाता है। नय जैनदर्शन के अतिरिक्त अन्य किसी भी दर्शन में नहीं हैं; किन्तु प्रमाण सभी दर्शनों में हैं, चाहे भारतीय दर्शन हो, चाहे पाश्चात्य ह्न सभी में प्रमाण पाया जाता है।

जिसे हम न्यायशास्त्र कहते हैं; वे सब प्रमाणव्यवस्था के ग्रंथ हैं। परीक्षामुख, प्रमेयरत्नमाला, प्रमेयकमलमार्तण्ड, आप्तमीमांसा, अष्टशती तथा अष्टसहस्त्री ये जितने भी न्याय के ग्रंथ हैं या न्याय के नाम पर जो ग्रन्थ पढ़ाये जाते हैं; वे लगभग सभी प्रमाणव्यवस्था के प्रतिपादक ग्रंथ हैं।

ये सभी ग्रन्थ इस बात का प्रतिपादन करते हैं कि वस्तु को जाननेवाले ज्ञान का वास्तविक स्वरूप क्या है ?

जिसप्रकार पाश्चात्य दार्शनिकों ने संपूर्ण विश्व को दो भागों में विभाजित किया; उसीप्रकार आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने इस ग्रंथाधिराज में मुख्यरूप से दो विभाग किए ह्न (1) ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन (2) ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन

प्रथम तो जाननेवाले को जानो; फिर जाननेवाले ने क्या-क्या जाना ह्न यह जानो। जब इन दोनों का प्रतिपादन सम्पन्न हुआ; जब ज्ञानतत्त्व एवं ज्ञेयतत्त्व प्रज्ञापन का मंदिर बनकर तैयार हुआ; तब आचार्यदेव ने उस पर शिखर बनाने के लिए चरणानुयोगसूचक चूलिका का निर्माण किया। अर्थात् जिस तत्त्वज्ञान को हमने गहराई से जाना है; अब उसे हम अपने जीवन में कैसे उतारें ह्न इसके वर्णन के लिए उन्होंने दो अधिकारों के पश्चात् एक चरणानुयोग चूलिका नामक अधिकार लिखा।

वास्तव में जब हम चूलिका कहते हैं; तब वह ग्रंथ का वैसा भाग नहीं होता है, जैसा भाग उसके अधिकार हुआ करते हैं।

आचार्य कहते हैं कि इन दो अधिकारों के पश्चात् भी कुछ कथन शेष है। वस्तु-व्यवस्था का निरूपण हो गया है; परन्तु जिनने उस वस्तु-व्यवस्था के अनुसार अपना आचरण बनाया है; उनका आचरण कैसा होता है, कैसा होना चाहिए ? यह सब वर्णन आचार्यदेव ने चरणानुयोग चूलिका में किया है।

चूलिका की परिभाषा आचार्य जयसेन स्वयं इसप्रकार देते हैं ह्न

''उक्त विषय का प्रतिपादन, अनुक्त विषय का प्रतिपादन तथा उक्त और अनुक्त दोनों के मिले हुए रूप का प्रतिपादन जिसमें किया जाता है; उसका नाम है चूलिका।''

इस कथन का आशय यह है कि इसमें किसी भी विषय का क्रमबद्ध प्रतिपादन नहीं होता है।

उक्त अर्थात् कही गई बात। वह विषय जो मूलवस्तु के प्रतिपादन में कहने से रह गया है; उसे कहते हैं ह्न अनुक्त। कुछ बातें ऐसी होती हैं, जो कह दी गई हैं; फिर भी उनपर विशेष ध्यानाकर्षित करने के लिए उनका दुबारा कहा जाना आवश्यक प्रतीत होता है। कुछ विशेष कथन ऐसे भी होते हैं, जिन्हें समाविष्ट करके ही कथन किया जा सकता है। भले ही हम अनुक्त बात कहना चाहते हैं; परन्तु जो उक्त अर्थात् अभी हमने कह दी है; उसके बिना उस अनुक्त अर्थात् न कही गई बात को कहना संभव ही नहीं होता है; अत: उसे हम उक्तानुक्त संकीर्ण व्याख्यान कहते हैं।

इसप्रकार यह सुनिश्चित हुआ कि **उक्त व्याख्यान, अनुक्त व्याख्यान**

एवं उक्तानुक्त संकीर्ण व्याख्यान जहाँ किया जाता है, उसे चूलिका कहते हैं। इसमें यह नहीं कहा जा सकता कि आप विषयान्तर हो गए; क्योंकि चूलिका कहते ही उसे हैं कि जिसमें सबकुछ कहा जा सकता है।

इसप्रकार आचार्यदेव ने चरणानुयोगसूचक चूलिका नामक तीसरा अधिकार बनाया।

आचार्य जयसेन ने भी कुन्दकुन्द के समयसार, प्रवचनसार और पञ्चास्तिकाय ह्न इन तीन ग्रन्थों पर टीकाएँ लिखी हैं। उन्होंने तीनों टीकाओं का एक ही नाम **तात्पर्यवृत्ति** रखा है; जबकि आचार्य अमृतचन्द्र ने समयसार की टीका का नाम **आत्मख्याति**, प्रवचनसार की टीका का नाम **तत्त्वप्रदीपिका** तथा पञ्चास्तिकाय की टीका का नाम **समयव्याख्या** रखा है।

प्रवचनसार के तीन अधिकारों को जयसेनाचार्य अपनी तात्पर्यवृत्ति टीका में सम्यग्ज्ञानाधिकार, सम्यग्दर्शनाधिकार तथा सम्यग्चारित्राधिकार के नाम से संबोधित करते हैं। जयसेनाचार्य ने पातनिकाओं को मध्य-मध्य में समाविष्ट करके 'क्या कह दिया है एवं आगे क्या कहेंगे' ह्न इस भाँति विषयवस्तु को समग्रत: स्पष्ट किया है।

चरणानुयोग चूलिका नामक अधिकार को सम्यग्चारित्राधिकार नाम से जो महत्त्व प्राप्त होता है; वह महत्त्व चूलिका या परिशिष्ट कहने से नहीं। यही कारण है कि आचार्य जयसेन ने इस अधिकार का नाम सम्यक्चारित्र अधिकार रखा।

प्रथम महाधिकार में प्रमाणव्यवस्था का वर्णन है अर्थात् ज्ञानतत्त्व का वर्णन है; अत: आचार्य जयसेन का उसे सम्यग्ज्ञानाधिकार कहना स्वाभाविक ही है। जब प्रथम अधिकार को सम्यग्ज्ञानाधिकार एवं अंतिम अधिकार को सम्यक्चारित्राधिकार से कह दिया तो अब मध्य के अधिकार को सम्यग्दर्शनाधिकार कहने के अतिरिक्त कोई उपाय शेष नहीं रहता है।

आचार्य उमास्वामी ने जब रत्नत्रय का वर्गीकरण किया; तब उन्होंने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक्चारित्र ह्न इसप्रकार का क्रम रखा; जबकि जयसेनाचार्य ने प्रवचनसार की इस टीका में प्रथम अधिकार का नामकरण सम्यग्ज्ञान अधिकार किया और दूसरे अधिकार को सम्यग्दर्शन अधिकार नाम दिया। मोक्षमार्ग-प्रकाशक ग्रंथ में भी इस सन्दर्भ में उल्लेख है कि **श्रद्धान के पूर्व ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है; क्योंकि अज्ञात का श्रद्धान तो गधे के सींग के समान है। इसलिए सबसे पहले वस्तु के स्वरूप को जानना अत्यंत आवश्यक है।**

प्रवचनसार ग्रंथाधिराज पर संस्कृत भाषा में दो महान टीकाएँ लिखी गईं। एक, आज से 1000 वर्ष पूर्व आचार्य अमृतचन्द्र ने 'तत्त्वप्रदीपिका' नामक टीका लिखी और दूसरी, उसके 300 वर्ष पश्चात्, आज से 700 वर्ष पूर्व आचार्य जयसेन ने 'तात्पर्यवृत्ति' नामक टीका लिखी।

आचार्य अमृतचन्द्र द्वारा लिखी गई **तत्त्वप्रदीपिका** टीका एक प्रौढ़तम कृति है; अत: कुछ लोग इसे जटिल भी कहते हैं। लोगों की इसी समस्या को ध्यान में रखकर आचार्य जयसेन ने **तात्पर्यवृत्ति** नामक सरल-सुबोध टीका लिखी है। तात्पर्यवृत्ति नाम से भी यह ज्ञात हो जाता है तथा उनके इसप्रकार के उल्लेखों से कि 'तात्पर्य यह है कि ...' से भी समझ सकते हैं कि वे हर गाथा का तात्पर्य या निष्कर्ष प्रस्तुत करते हैं; अत: उनकी टीका का नाम 'यथा नाम तथा गुण' सार्थक ही है।

पञ्चास्तिकाय ग्रंथ की टीका लिखते समय वे स्वयं लिखते हैं कि हर ग्रंथ का सूत्रतात्पर्य अलग होता है और शास्त्रतात्पर्य अलग। प्रत्येक गाथा का तात्पर्य भिन्न-भिन्न होता है एवं संपूर्ण ग्रंथ का तात्पर्य उससे भी भिन्न होता है।

गाथा का तात्पर्य गाथा की टीका में ही बता दिया जाता है और ग्रंथ के तात्पर्य को स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि वीतरागता की तथा सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की प्राप्ति होना ही सभी शास्त्रों का एक मात्र तात्पर्य है। इसतरह उन्होंने अपनी टीका का नाम 'तात्पर्यवृत्ति' रखा।

उन्होंने यह अनुभव किया कि तत्त्वप्रदीपिका में जो कहा गया है; वह शत-प्रतिशत सत्य होने पर भी, नयविभाग से कहा जाने पर भी, उसमें नयों के नाम का उल्लेख नहीं किया है; जिससे बहुत से लोगों को भ्रम हो सकता है। अत: उन्होंने अपनी सभी तात्पर्यवृत्ति टीकाओं में ह्न चाहे वह समयसार की हो या प्रवचनसार की हो अथवा पञ्चास्तिकाय की हो सभी में नयों के नामोल्लेखपूर्वक मर्म खोलने की कोशिश की है। 'यह निश्चयनय का कथन है, यह व्यवहारनय का कथन है, यह उपचरित-नय, यह अनुपचरित नय से है, यह सद्भूतव्यवहारनय से है, यह अशुद्ध-निश्चय नय से है' ह्न इसप्रकार उन्होंने नयविभाग का खुलासा किया है।

अत: नयविभाग को जानना हो तो जयसेन की तात्पर्यवृत्ति नामक टीका बहुत महत्त्वपूर्ण है। वे अपनी टीकाओं को बालबोधिनी टीकायें कहते हैं। अत: उन्होंने उसमें अन्वय की विशेषता रखी है। प्रथम तो प्राकृत का शब्द लिखते हैं, तदनन्तर उसे संस्कृत में बताते हैं, फिर व्याकरण से उसकी व्युत्पत्ति बताकर सयुक्तिक उसका अर्थ सिद्ध करते हैं। इसप्रकार आचार्य जयसेन एक-एक शब्द, एक-एक वाक्य का अर्थ बताते हैं; जबकि अमृतचन्द्राचार्य की टीकाओं में ऐसा नहीं है।

अमृतचन्द्राचार्य सर्वप्रथम गाथा के भाव को पूर्णत: पूरी गहराई के साथ अपने हृदय में समाहित कर लेते हैं; फिर अंतरतम की गहराई के साथ उसे विशुद्ध तर्कसंगत शैली में, उत्कृष्टतम भाषा के प्रयोगों के साथ, लम्बे-लम्बे वाक्यों के द्वारा अपनी बात को श्रोताओं के सामने रखते हैं। उनकी इस शैली से ऐसा लगता है कि उनके जो श्रोता हैं; वे प्रबुद्ध हैं, उन्हें नयविभाग बताने की आवश्यकता नहीं है। वे श्रोता स्वयमेव ही नयविभाग को समझ लेते हैं, व्याकरण को समझ लेते हैं।

अमृतचन्द्राचार्य उन्हें शब्द की व्युत्पत्ति, व्याकरण बताना आवश्यक नहीं समझते; क्योंकि अमृतचन्द्राचार्य मानते हैं कि जिनवाणी की व्याख्या के मध्य भाषा पढ़ाने लगना, मध्य-मध्य में न्याय पढ़ाने लगना उचित नहीं है ह्न इससे जो मुख्य विषयवस्तु का प्रतिपादन है, उसमें बाधा उत्पन्न होती है।

यदि हम सम्यग्दर्शन की विषयवस्तु पर मंथन कर रहे हों और बीच में ही सम्यग्दर्शन शब्द का पूरा व्याकरण समझाने लगे कि 'इसमें यह संधि है, यह समास है, यह प्रत्यय है' तो मूल विषय छूट जायेगा। यदि न्याय-व्याकरण के विस्तार में जायेंगे तो सम्यग्दर्शन की विशुद्ध विषयवस्तु एक तरफ रह जाएगी और न्याय-व्याकरण आरंभ हो जाएगें। **(क्रमश:)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल द्वारा विरचित तीर्थंकर स्तवन क्रमश: यहाँ दिया जा रहा है ह्न

तीर्थंकर-स्तवन

8. श्री चन्द्रप्रभ स्तवन

चन्द्र जिनका चिह्न है, वे चन्द्रप्रभ परमातमा।
जो पूजता उनके चरण, वह आतमा परमातमा।।
जो चलें उनके चरण-पथ, वे भव्य अन्तरातमा।
जो जानता उनको नहीं, वह व्यक्ति है बहिरातमा।।

9. श्री सुविधिनाथ स्तवन

अष्टविधि से रहित हो, फिर भी कहाते सुविधि नाथ।
तिल-तुष परिग्रह भी नहीं, फिर भी कहाते जगतनाथ।।
जो शरण उनकी गहत है, वह होत भवदधि पार है।
अक्षय अनन्त ज्ञायक प्रभु की, वन्दना शत बार है।।

10. श्री शीतलनाथ स्तवन

चन्दनसम शीतल हो प्रभुवर, चन्द्रकिरण से ज्योतिर्मय।
कल्पवृक्ष से चिह्नित हो अरु, सप्तभयों से हो निर्भय।।
तुमसा ही हूँ मैं स्वभाव से, हुआ आज मुझको निर्णय।
अब अल्पकाल में ही होगा प्रभु, मुक्तिरमा से मम परिणय।।

11. श्री श्रेयांसनाथ स्तवन

कोई किसी का नाथ नहीं, फिर भी तुम नाथ कहाते हो।
श्रेयस्कर कर्तृत्व नहीं, फिर भी श्रेयांस कहाते हो।।
जिनवाणी का वक्तृत्व नहीं, पर मोक्षमार्ग दर्शाते हो।
अरस अरूपी हो प्रभुवर! अमृत रसधार बहाते हो।।

ह्न यह 'तीर्थंकर स्तवन' पुस्तक रूप में भी उपलब्ध है।

शुभकामनायें !

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक चि. जिनेन्द्रकुमार पुत्र श्री लक्ष्मीचन्दजी जैन उदयपुर निवासी का विवाह सौ.का. सीमा सुपुत्री श्री राजमलजी जैन टीमरवा-उदयपुर के साथ दिनांक 14 फरवरी, 2004 को सम्पन्न हुआ। हम जैनपथप्रदर्शक परिवार की ओर से नवदम्पत्ति के लौकिक एवं पारलौकिक जीवन की सफलता की कामना करते हैं। इस अवसर पर जैनपथप्रदर्शक समिति को 301/-रुपये प्राप्त हुये; एतदर्थ धन्यवाद !

समन्वयवाणी का विरधीलाल सेठी विशेषांक

प्रसिद्ध समाज सुधारक श्री विरधीलालजी सेठी के जन्म शताब्दी वर्ष के उपलक्ष में समन्वयवाणी का अप्रेल अंक **विरधीलाल सेठी विशेषांक** प्रकाशित किया जा रहा है। तत्सम्बन्धी रचनायें एवं संस्मरण सादर आमंत्रित हैं। **- सम्पादक, अखिल बंसल**

129, जादोन नगर-बी, स्टेशन रोड, दुर्गापुरा, जयपुर-18 (राज.)

वेदीप्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

सरधना (उ.प्र.): यहाँ दिनांक 25 एवं 26 जनवरी 2004 को श्री चन्द्रप्रभ दिगम्बर जैन मन्दिर में 108 आचार्य श्री धर्मभूषणजी महाराज के सान्निध्य में वेदी प्रतिष्ठा एवं कलशारोहण महोत्सव सानन्द सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर याग मण्डल विधान एवं शान्तिविधान का आयोजन हुआ। विधि-विधान के कार्य पण्डित राजेन्द्रजी पाटील एवं पण्डित प्रशान्तजी मोहरे, सोलापुर ने सम्पन्न कराये।

दोनों दिन प्रात: 108 आचार्य श्री धर्मभूषणजी महाराज के प्रवचन का लाभ मिला। तथा रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति के पश्चात् पण्डित कल्पेन्द्रजी खतौली के मोक्षमार्गप्रकाशक पर मार्मिक प्रवचन हुये।

इसी प्रसंग पर नवीन वीतराग-विज्ञान पाठशाला का शुभारंभ कर एक विशेष कार्य मण्डली भी स्थापित की गई।

रात्रि में पण्डित सोनूजी शास्त्री खतौली एवं पण्डित प्रशांतजी शास्त्री सोलापुर द्वारा अनेक ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये। सम्पूर्ण कार्यक्रम में पण्डित कल्पेन्द्रजी जैन खतौली एवं पण्डित सोनूजी शास्त्री खतौली का मार्गदर्शन रहा।

वैराग्य समाचार

1. जयपुर निवासी श्री कोमलचन्दजी गोधा की धर्मपत्नी श्रीमती राजकुमारीजी का 3 फरवरी, 2004 को देहावसान हो गया। आप सरलस्वभावी एवं धार्मिक महिला थी। ज्ञातव्य है कि पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर की समस्त गतिविधियों में आपका सदा योगदान रहा है। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक समिति को 501/-रुपये प्राप्त हुये; एतदर्थ धन्यवाद !

2. श्रीमती रतनदेवी धर्मपत्नी स्व. श्री खेमचन्दजी जैन,भगोरिया का 18 जनवरी, 04 को देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान को 502/-रुपये प्राप्त हुये हैं; एतदर्थ धन्यवाद !

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों - यही भावना है।

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) फरवरी (द्वितीय) 2004
J. P.C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए.जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन तथा इतिहास ❊ **पं. जितेन्द्र वि.राठी शास्त्री**
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127